[2010] 13 (ADDL.) S.C.R. 803

अल्वा एल्युमीनियम लिमिटेड बैंकॉक

बनाम

गेब्रियल इंडिया लिमिटेड

(मध्यस्थता याचिका संख्या 2/2010)

निर्णय: 16-11-2010

[टी.एस. ठाकुर, जे.]

मध्यस्थता और सुलह अधिनियम , 1996 :

धारा 11 (9), (5) एवं 16 - मध्यस्थ की नियुक्ति - मध्यस्थ की नियुक्ति - अनुबंध में मध्यस्थता खंड के अस्तित्व के संबंध में पक्षकारान के मध्य विवाद। निस्तारित किया गयाः एक बार मध्यस्थता अनुबंध के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिन्ह लग गया है, वहाँ उक्त प्रश्न का निस्तारण मुख्य न्यायाधीश या उनके नामित व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है- मध्यस्थ अधिकरण को धारा 16 के अंतर्गत शक्ति उपलब्ध है - धारा 16 के अंतर्गत मध्यस्थ अधिकरण को प्रदत्त शक्ति के अंतर्गत उक्त विवाद का निस्तारण नहीं किया जा सकता। भले ही धारा 11 के तहत आवेदन में कोई मध्यस्थता अनुबंध के अस्तित्व के संबंध में पक्षकारान के मध्य विवाद हो - वर्तमान मामले में पक्षकारान के मध्य एक लिखित अनुबंध दस्तावेज

मध्यस्थता खंड शामिल है - मध्यस्थता खंड - तदनुसार, मध्यस्थ नियुक्त - संविदा अधिनियम, 1872:

संविदा अधिनियम, 1872: संविदा - हस्ताक्षर - कंपनी का तर्क है कि उसके अधिकारी द्वारा केवल कंपनी की ओर से अनुबंध पर बातचीत की गई थी, वह अनुबंध पर हस्ताक्षर करने में सक्षम नहीं था और उसे प्रतिपक्षी द्वारा गुमराह/प्रलोभित किया गया - निर्णितः स्वीकार नहीं किया जा सकता- दस्तावेज़, जानकारी और पत्राचार, जब लिख लिया जाता है तब उनकी समग्रता, विशेष रूप से हस्ताक्षरित अनुबंध के आलोक में दस्तावेज़ जो पारस्परिक अधिकारों और दायित्वों को निर्धारित करता है पक्षकारान यह दर्शित नहीं कर सकते कि वे केवल वार्ता कर रहे थे - इसके विपरीत, स्पष्ट रूप से संकेत देने वाले हैं - पक्षकारान ने एक अनुबंध को अंतिम रूप दे दिया है और उस पर हस्ताक्षर कर दिए हैं - इसके अतिरिक्त रिकार्ड पर ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह दर्शित करता हो कि संबंधित अधिकारी ने जो स्वीकृति के रूप में संविदा के दस्तावेज पर हस्ताक्षर किए हैं, वे गलतबयानी इत्यादि के कारण दूषित हों- मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996.

याचिकाकर्ता, एक संयुक्त उद्यम कंपनी है जो थाईलैंड के विधिक प्रावधानों के अंतर्गत निगमित हुई है जिसने हस्तगत प्रार्थनापत्र अंतर्गत धारा 11 उपधारा (5) और (9) मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 के

तहत यह कहते हुए कि अयाची के साथ 30. 7 .2008 को उनकी संविदा हुई। अयाची कंपनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के अंतर्गत एक निगमित कंपनी है। संविदा की शर्तों के अधीन याची द्वारा 150 "एल्यूमीनियम मिश्र धातु सिल्लियां AC2B" विक्रय किया गया तथा अयाची द्वारा क्रय किया गया, परंतु अयाची द्वारा क्रेडिट पत्र को नहीं खोला गया। अयाची द्वारा यह तर्क लिया गया कि जिस अनुबंध लिखत के आधार पर याची यह याचिका लाया है वह दस्तावेज अयाची द्वारा प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित नहीं था, इसलिए वह अयाची पर बाध्यकारी नहीं है व उसके विरुद्ध लागू नहीं होता है; जिस व्यक्ति (एस के डी) ने यह दस्तावेज हस्ताक्षरित किया वह केवल क्रय करने की वार्ता हेतु प्राधिकृत था तथा संविदा को हस्ताक्षरित करने के लिए प्राधिकृत नहीं था ; (एस के डी) के हस्ताक्षर गलत मार्गदर्शन/प्रलोभन एवं गलत निर्देशों के अधीन याची द्वारा प्राप्त किये गये ; और पक्षकारों के मध्य कोई मध्यस्थ संविदा अस्तित्व में नहीं थी, जिससे कि हस्तगत प्रकरण रेफर किया जा सके।

न्यायालय के समक्ष अवधारण के लिए निम्न प्रश्न थेः- (1) क्या इस न्यायालय द्वारा मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11(5) और 11(9) के अंतर्गत याचिका में पक्षकारान के बीच मध्यस्थता समझौते के अस्तित्व को निर्धारित किया जाना चाहिए? और (2) क्या वर्तमान मामले में पक्षकारान के बीच उत्पन्न विवादों और मतभेदों के निपटारे के

लिए मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए ऐसा कोई समझौता वास्तव में निष्पादित किया गया है?

न्यायालय द्वारा याचिका स्वीकार की गई। निर्णितः

1.1 एक बार अधिनियम की धारा 11 के तहत शुरू की गई कार्यवाही में किसी भी पक्ष द्वारा मध्यस्थता समझौते के अस्तित्व पर सवाल उठाया जाता है, तो इसे मुख्य न्यायाधीश/नामित द्वारा मामले के अनुसार तय करना होगा। ऐसा इसलिए है क्योंकि मध्यस्थता समझौते का अस्तित्व एक क्षैत्राधिकार से सम्बन्धित तथ्य है जिसे अधिनियम की धारा 11 के तहत याचिका पर आदेश देते समय संबोधित करना होगा। [पैरा 17] [815-D-F]

नैशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम बोघारा पाॅलीफैद प्रा.लि. 2008 (13) एस.सी.आर 638 = 2009 (1) एस सी सी 267; ए.पी. टूरिज्म डवलपमेंट काॅर्पोरेशन लि. बनाम पम्पा होटल लि. 2005(4) पूरक एस.सी.आर 688=2010(5) एस सी सी 425; एसबीपी एंड कंपनी बनाम पटेल. 2005 (8) एस सी सी 618

1.2 जहाँ अधिनियम की धारा 11 के अंतर्गत याचिका दायर की गई है, एवं दूसरे पक्षकार द्वारा उसको पेश करने का विरोध इस आधार पर किया गया है कि पक्षकारों के मध्य मध्यस्थ अनुबंध का अस्तित्व नहीं है, वहाँ मध्यस्थ अधिकरण को अधिनियम की धारा 16 के अंतर्गत उक्त मुद्दे को निर्धारित करने की शक्ति प्रदत्त नहीं की गयी है। जहाॅं प्रश्न यह

है कि पक्षकारों के मध्य मध्यस्थ अनुबंध अस्तित्व में है अथवा नहीं, वहाॅं इस प्रश्न का उत्तर यदि सकारात्मक है वहाँ विवाद का निपटारा मुख्य न्यायाधीश अथवा उनके द्वारा नामित व्यक्ति द्वारा ही किया जा सकता है। [पैरा 17] [816-C-F]

2.1 हस्तगत प्रकरण में पक्षकारान के मध्य लिखित संविदा विवादग्रस्त नहीं है, जिसके अन्तर्गत मध्यस्थता खंड भी है; अयाची की ओर से 'एसकेडी' द्वारा संविदा की वार्ता की गई; पक्षकारान के मध्य संविदा पर हस्ताक्षर किये जाने से पूर्व पत्राचार किया गया वह भी केवल 'एसकेडी' द्वारा नहीं बल्कि 'एसजी' द्वारा भी किया गया, जो कि अयाची के अनुसार हस्ताक्षर हेतु सक्षम प्राधिकारी थे, जबकि अयाची का तर्क था कि 'एसकेडी' अनुबंध पर हस्ताक्षकर करने के लिए सक्षम नहीं था और उसे ऐसा करने के लिये याची द्वारा गुमराह/प्रलोभित/गलत निर्देशित किया गया, इस प्रकार, अनुबंध अमान्य है और अयाची के संदर्भ में शून्य है। अनुबंध अधिनियम, 1872 के अनुसार स्वीकार नहीं किया जा सकता। दस्तावेज़, जानकारी और पत्राचार, जब लिख लिया जाता है तब उनकी समग्रता, विशेष रूप से हस्ताक्षरित अनुबंध के आलोक में दस्तावेज़ जो पारस्परिक अधिकारों और दायित्वों को निर्धारित करता है पक्षकारान यह दर्शित नहीं कर सकते कि वे केवल वार्ता कर रहे थे, इसके विपरीत, स्पष्ट रूप से संकेत देने वाले हैं कि पक्षकारान ने एक अनुबंध को अंतिम रूप दे

दिया है और उस पर हस्ताक्षर कर दिए हैं । [पैरा 18-20] [816-जी-एच; 817-ए-बी; एफ-एच]

2.2 यह कहना सही नहीं है कि 'एसकेडी' जिसने कि अयाची की ओर से अनुबंध पर बातचीत करना स्वीकार किया है, के पास ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं था और उसे याचिकाकर्ता ने गलत निर्देश दिया, प्रलोभन दिया या गुमराह किया। ऐसे कोई तथ्य या विवरण नहीं हैं जो यह स्थापित करते हों कि 'एसकेडी' द्वारा दस्तावेज की स्वीकृति के रूप में किये गये हस्ताक्षर किसी गलतबयानी या ऐसे किसी अन्य कारण से दूषित विचार के कारण किये गये और जो अनुबंध पर प्रभाव डाल सकते हैं। अयाची के द्वारा कोई ठोस विवरण पेश नहीं किया गया कि याचिकाकर्ता द्वारा किस प्रकार, अनुच्छेद 8 में उल्लिखित प्रलोभन, गलत मार्गदर्शन या गलत दिशा का प्रयोग किया गया, मात्र उक्त अभिव्यक्तियों को बार बार दोहराने से पक्षकारों के मध्य अस्तित्व मे आये अनुबन्ध को अयाची नकार नहीं सकता है। [पैरा 20) [818-ए-सी]

2.3 अनुबंध जो पक्षकारान के मध्य अस्तित्व में आया था, उसी पक्ष पर साबित करने का भार है जो ऐसे किसी भी आरोप के लिए गलत प्रतिनिधित्व, धोखाधड़ी या जबरदस्ती के आधार पर अनुबंध से बचना चाहता है। वर्तमान मामले में अयाची द्वारा ऐसा कुछ भी नहीं किया गया है। यहां तक कि अयाची ने श्री दबीर और श्री सेनगुप्ता के कर्तव्यों और

शक्तियों का कोई चार्टर भी रिकॉर्ड पर नहीं रखा है और न ही यह सुझाव देने के लिए कोई सामग्री रिकॉर्ड पर रखी है कि कथित उल्लंघन के लिए श्री दबीर के खिलाफ वास्तव में कोई कार्रवाई की गई थी। उसके अधिकार की सीमाएं और यदि हां तो उसके विरुद्ध की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई की प्रकृति, यह सारी जानकारी और सामग्री अयाची की विशेष जानकारी में थी। इसलिए, ऐसी जानकारी न देने पर, अयाची के विरुद्ध प्रतिकूल उपधारणा होती है। [पैरा 21] [818-सी-एफ]

2.4 याचिकाकर्ता कंपनी के पास किसी भी स्थिति में ऐसा विश्वास करने का या संदेह करने का कोई भी कारण नहीं था कि 'एसकेडी', जिसके साथ वह सौदा कर रहा था, दोनों कंपनियों के बीच अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से कार्य कर अनुबंध को अंतिम रूप दिया जा रहा था, उसके पास हस्ताक्षर करने का अधिकार नहीं था। विशेष रूप से तब जब अयाची के अनुसार भी, 'एसकेडी' अयाची की ओर से शर्तों पर बातचीत करने के लिए अधिकृत है। यदि 'एसकेडी' अनुबंध की शर्तों पर बातचीत करने में सक्षम था तो याचिकाकर्ता के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि उसने प्रलोभन दिया या धोखाधड़ी की और उसे अनुबंध पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा गया, जिसे अयाची की ओर से भेजा गया था और याची की ओर से विधिवत हस्ताक्षरित करके उसे अनुबंध लौटा दिया गया था। याची ने इस आधार पर अनुबंध किया कि अनुबंध विधिवत था और अयाची कंपनी की

ओर से ही बातचीत की गई और हस्ताक्षर किए गए। [पैरा 21] [818-एफ-एच; 819-ए-बी]

2.5 परिस्थितियों की समग्रता अनुसार वास्तव में पक्षकारान के मध्य कानूनी रूप से वैध अनुबंध अस्तित्व में आया था और जिसमें उनके मध्य उत्पन्न होने वाले विवादों के निपटारे के लिए मध्यस्थता खंड शामिल था। पक्षकारान के मध्य उत्पन्न हुए विवाद के निपटारे के लिए मध्यस्थ नियुक्त किया गया [पैरा 21-21] [819-बी-डी]

प्रकरण के विधिक संदर्भ जिन पर निर्भर किया गया

2008 (13) एस.सी.आर 638 पैरा 16

2005 (4) पूरक एस.सी.आर 688 पैरा 16

मूल दीवानी क्षेत्राधिकारः मध्यस्थता याचिका क्रमांक 02/2010

मध्यस्थता एवं सुलह अधिनियम की धारा 11(5) एवं 11(9) के तहत

याची की ओर से कौविन गुलाटी, शाभित चंद्र, उमेश कुमार खैतान

अयाची की ओर से टी.के.ए. पद्मनाभन, रमेश लाल भाटिया

न्यायालय का निर्णय श्री टी.एस. ठाकुर, न्यायाधीश द्वारा पारित किया गया।

1. यह याचिका पक्षकारान के मध्य उत्पन्न हुए विवादों के निपटारे के लिए, एकमात्र मध्यस्थ के रूप में एक स्वतंत्र और निष्पक्ष व्यक्ति की

नियुक्ति के लिए मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11 की उपधारा (5) और (9) के अन्तर्गत दायर की गई है। अयाची द्वारा मुख्य रूप से इस आधार पर याचिका का विरोध किया गया है कि पक्षकारान के मध्य कोई वैध मध्यस्थता समझौता मौजूद नहीं है जिससे कि उसके संदर्भ में मध्यस्थ की नियुक्ति की मांग की जा सके। अयाची का मामला मुख्य रूप से यह है कि जिस अनुबंध दस्तावेज़ पर याचिकाकर्ता भरोसा करता है उस पर उसकी ओर से किसी अधिकृत व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षर नहीं किया गया है और इसलिए, यह उसके खिलाफ बाध्यकारी या लागू करने योग्य नहीं है। पक्षकारान की ओर से प्रस्तुत तर्कों के आधार पर मुख्य रूप से दो प्रश्नों का निर्धारण किया जाना है जो निम्नानुसार है:-

(1) क्या इस न्यायालय द्वारा मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11(5) और 11(9) के अंतर्गत याचिका में पक्षकारान के बीच मध्यस्थता समझौते के अस्तित्व को निर्धारित किया जाना चाहिए? और

(2) क्या वर्तमान मामले में पक्षकारान के बीच उत्पन्न विवादों और मतभेदों के निपटारे के लिए मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए ऐसा कोई समझौता वास्तव में निष्पादित किया गया है?

2. उक्त दोनों प्रश्नों का निस्तारण करने से पहले प्रकरण के आवश्यक तथ्यों पर प्रकाश डाला जाना उचित समझता हूं।

3. याचिकाकर्ता थाईलैंड में जीपी ग्रुप और भारत में क्लिस ग्रुप के बीच एक संयुक्त उद्यम कंपनी है, जिसे थाईलैंड के विधिक प्रावधानों के तहत निगमित किया गया है। दूसरी ओर, अयाची, कंपनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के तहत निगमित एक भारतीय कंपनी है। जिन विवादों को न्यायनिर्णयन किया जाना है, उनमें उक्त अधिनियम की धारा 2(एफ) सपठित धारा 11(9) के अर्थ के अंतर्गत अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता शामिल है।

4. याचिकाकर्ता-कंपनी का अयाची कंपनी के साथ पूर्व में वाणिज्यिक लेनदेन प्रकट होता है। उक्त लेन-देन के व्यापारिक संबंधों के दौरान याचिकाकर्ता द्वारा बिक्री और अयाची द्वारा 75 मीट्रिक टन "एल्यूमीनियम मिश्र धातु सिल्लियां एडीसी 12" की खरीद के लिए अनुबंध संख्या 057/2008 किया गया था। हालाकि, वर्तमान कार्यवाही उक्त अनुबंध से संबंधित नहीं है। ये कार्यवाही याचिकाकर्ता द्वारा बिक्री के लिए 30 जुलाई, 2008 को निष्पादित अनुबंध संख्या 073/2008 और उक्त अनुबंध में निर्धारित नियमों और शर्तों पर 150 मीट्रिक टन "एल्यूमीनियम मिश्र धातु इनगॉट्स एसी2 बी" की अयाची द्वारा खरीद से संबंधित है। अन्य नियमों और शर्तों के बीच अनुबंध में माल की कीमत 3490 अमेरिकी डॉलर प्रति

एमटी (सीआईएफ) निर्धारित की गई, जो 100% लेटर ऑफ क्रेडिट (एलसी) द्वारा देय होगी।

5. याचिकाकर्ता का मामला यह है कि अनुबंध पर उसकी ओर से विधिवत हस्ताक्षर किए गए थे और अयाची को हस्ताक्षर के लिए भेज दिया गया था। अयाची द्वारा अनुबंध के विधिवत हस्ताक्षरित संस्करण की एक फोटोकॉपी याचिकाकर्ता को वापस कर दी गई। यह विवादित नहीं है कि अनुबंध दस्तावेज़, जिसकी एक प्रति रिकॉर्ड पर रखी गई है, में निम्नलिखित मध्यस्थता खंड शामिल है:

> "विवाद और मध्यस्थता: यदि मात्रा और/या गुणवत्ता के लिए कोई विवाद है, तो खरीददार को दोनों पक्षों के बीच सहमति के अनुसार मात्रा या गुणवत्ता से विचलन के प्रमाण के साथ खरीददार के कारखाने में सामग्री प्राप्त होने पर 10 दिनों के भीतर विक्रेता को सूचित करना होगा।
>
> इसके बाद विक्रेता खरीददार के साथ सौहार्दपूर्ण ढंग से विवाद का निपटान करेगा।
>
> अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के अनुसार शुद्ध वजन पर 0.5% वेट कैलिब्रेशन स्वीकार्य है।
>
> यदि दोनों पक्ष अनुबंध या उसके उल्लंघन के संबंध में किसी भी विवाद को सौहार्दपूर्ण ढंग से हल करने में असमर्थ

हैं, तो भारत के कानूनों के अनुसार किए गए मध्यस्थता के परिणाम अंतिम और दोनों पक्षों पर बाध्यकारी होंगे। मध्यस्थता शुल्क और इस संबंध में कोई भी अन्य शुल्क असफल पक्षकार द्वारा वहन या प्रतिपूर्ति की जाएगी।"

6. उक्त के बाद 24 सितंबर, 2009 को एक परिशिष्ट जारी किया गया। याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा पूर्व में भेजे गए बार-बार अनुरोध और अनुस्मारक के बावजूद अयाची ने अपेक्षित क्रेडिट पत्र नहीं खोला, इसके बावजूद अनुबंध का निष्पादन और उसके लिए एक परिशिष्ट जारी किया गया। याचिकाकर्ता कंपनी ने अपने अधिवक्ताओं और सॉलिसिटरों को एक विधिक नोटिस भेजने का निर्देश दिया, जिसमें अयाची को नोटिस प्राप्त होने के सात दिवस के भीतर याचिकाकर्ता के पक्ष में क्रेडिट पत्र खोलने का अंतिम अवसर दिया गया, जिसमें विफल रहने पर याचिकाकर्ता ने उचित विधिक कार्यवाही शुरू करने के लिए प्रस्तावित किया। जिसमें याचिकाकर्ता अनुबंध की शर्तों के उल्लंघन के कारण याचिकाकर्ता को हुए सभी नुकसान और लागत के लिए अयाची के विरुद्ध विधिक कार्यवाही करने हेतु स्वतंत्र होगा। नोटिस पर उत्तरदाताओं की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं आई और न ही याचिकाकर्ता की ओर से बाद में भेजे गए दो नोटिस के जवाब आए।

7. चौथा और अंतिम नोटिस अंततः याचिकाकर्ता द्वारा अपने कानूनी सलाहकारों के माध्यम से भेजा गया जिसमें याचिकाकर्ता ने दोहराया कि

अयाची अनुबंध के तहत अपने दायित्वों को पूरा करने में विफल रहा जिसके परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता को भारी नुकसान हुआ, जिसका मूल्यांकन याचिकाकर्ता के अनुसार USD 338,286.34 (1,69,75,208.54/- रुपये) है। तदनुसार, अयाची के विरुद्ध उस राशि के भुगतान की मांग की गई थी। केवल इस स्तर पर, अयाची ने पद्मनाभन एसोसिएट्स, उनके अधिवक्ताओं और सॉलिसिटरों के माध्यम से एक उत्तर भेजा, जिसमें अयाची पहली बार बचाव में सामने आया कि याचिकाकर्ता द्वारा संदर्भित अनुबंध पर प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षर नहीं किए गए थे। अयाची ने आरोप लगाया कि श्री संदीप के. दबीर, जिन्होंने अनुबंध दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर किए थे, अनुबंध पर हस्ताक्षर करने के लिए अधिकृत नहीं थे। आगे यह भी आरोप लगाया गया कि याचिकाकर्ता कंपनी को अयाची द्वारा प्रदान किए गए दस्तावेज़, जानकारी और पत्राचार केवल संबंधित सामग्री की खरीद के संबंध में "एक प्रकार की वार्ता" थी। अयाची के अनुसार श्री दबीर खरीद की शर्तों पर वार्ता करने के लिए अधिकृत थे, किंतु वह किसी भी समय अनुबंध करने के लिए अधिकृत नहीं थे। यह दावा किया गया कि उनके हस्ताक्षर उन्हें गुमराह और प्रलोभित करके प्राप्त किए गए थे। इसलिए, कथित अनुबंध को शून्य और अप्रवर्तनीय होने के कारण अस्वीकार कर दिया गया था।

8. याचिकाकर्ता ने उत्तर का एक प्रत्युत्तर भेजा जिसमें उन्होंने बताया कि अयाची का प्रतिनिधित्व न केवल श्री संदीप के. दबीर ने किया था,

बल्कि श्री एस. सेनगुप्ता ने भी किया था, जिनके साथ काफी पत्राचार का आदान-प्रदान किया गया था। आगे यह भी कहा गया कि पत्राचार के दौरान किसी भी स्तर पर याचिकाकर्ता को कोई संकेत नहीं दिया गया कि श्री दबीर और श्री सेनगुप्ता संबंधित अनुबंध को अंतिम रूप देने और उस पर हस्ताक्षर करने के लिए सक्षम नहीं थे।

9. इस प्रकार पक्षकारान ने पूरी तरह से विरोधाभासी स्थिति अपनाई, याचिकाकर्ता ने अयाची को सूचित किया कि उसने विवादों पर निर्णय लेने के लिए श्री राहुल नरिचनिया को एकमात्र मध्यस्थ के रूप में नामित किया था और यदि उन्हें एकमात्र मध्यस्थ के रूप में उनके कार्य करने पर कोई आपत्ति है, तो अयाची अपनी ओर से एक मध्यस्थ को नामांकित कर सकता है। चूँकि अयाची अपने रुख पर अड़ा रहा कि पक्षकारान के बीच कोई वैध अनुबंध नहीं था और मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने के लिए कोई मध्यस्थता समझौता मौजूद नहीं था, परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता के पास एक स्वतंत्र मध्यस्थ की नियुक्ति की मांग करने वाली वर्तमान याचिका दायर करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा था।

10. जैसा कि पहले देखा गया है, याचिका का विरोध अयाची द्वारा न केवल याचिकाकर्ता द्वारा किए गए दावे की गुणागुण के आधार पर किया गया है, बल्कि इस आधार पर भी किया गया है कि पक्षकारान के बीच कोई मध्यस्थता समझौता मौजूद नहीं है जो संदर्भ बनाने के लिए आधार

प्रदान कर सके। अयाची के अनुसार, याचिकाकर्ता ने अयाची कंपनी को ब्लैकमेल करने के लिए श्री दबीर के हस्ताक्षर प्राप्त किए थे। आगे यह भी आरोप लगाया गया है कि अयाची कंपनी ने न केवल श्री दबीर के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई की, बल्कि अपने कर्मचारी के अनधिकृत कृत्य की पुष्टि करने से इनकार कर दिया। यह आरोप लगाया गया है कि केवल श्री सेनगुप्ता ही अनुबंध करने के लिए सक्षम थे और अयाची की ओर से उक्त अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित 7 जुलाई 2008 के प्रथम अनुबंध की पालना की गई।

11. याचिका के प्रत्युत्तर में, याचिकाकर्ता ने इस आरोप से इनकार किया है कि श्री दबीर सक्षम नहीं थे या उन्हें दुर्भावनापूर्ण कारणों से अनुबंध पर हस्ताक्षर करने के लिए प्रेरित किया गया था। आगे यह भी आरोप लगाया गया है कि वर्तमान याचिका में यह मुद्दा नहीं उठाया जा सकता है कि श्री दबीर संबंधित अनुबंध को निष्पादित करने के लिए अधिकृत थे या नहीं।

12. हस्तगत याचिका के निस्तारण हेतु जो बिंदू पूर्व में विरचित किये गये हैं, उन पर इस न्यायालय का विवेचन इस प्रकार से हैः-

प्रश्न क्रमांक (1) के संबंध में

13. इस न्यायालय के निर्णयों की एक लंबी श्रृंखला है जिसमें इस न्यायालय ने मध्यस्थता और सुलह अधिनियम 1996 की धारा 11 के तहत

याचिकाओं के निस्तारण के दौरान जांच की प्रकृति और दायरे और मुख्य न्यायाधीश या उनके पदनाम के अधिकार क्षेत्र की जांच की है। उन सभी निर्णयों का संदर्भ उस प्रश्न के लिए अनावश्यक है जो यहां निर्धारण के लिए आया है, इस न्यायालय के दो हालिया निर्णयों से यह निष्कर्ष निकलता है कि वे वर्तमान प्रकरण के प्रश्न के लिए अकेले ही पर्याप्त हैं।

14. नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम बोघारा पॉलीफैब (पी) लिमिटेड 2009 (1) एससीसी 267 में, इस न्यायालय ने अधिनियम की धारा 11 के प्रावधानों की जांच की और उन मुद्दों को वर्गीकृत किया जो मुख्य न्यायाधीश या उनके नामित के समक्ष धारा 11 के तहत एक याचिका में निर्धारण के लिए उत्पन्न हो सकते हैं और उसी के अनुरूप अपनाए जाने वाले दृष्टिकोण को वर्गीकृत किया गया है। कोर्ट ने मत प्रकट किया:

> "22.1. मुद्दे (प्रथम श्रेणी) जिन पर मुख्य न्यायाधीश/उनके मनोनीत न्यायाधीश को निर्णय लेना होगा वे हैं:
>
> (ए) क्या आवेदन करने वाले पक्ष ने सक्षम उच्च न्यायालय से संपर्क किया है।
>
> (बी) क्या कोई मध्यस्थता समझौता है और क्या जिस पक्ष ने अधिनियम की धारा 11 के तहत आवेदन किया है, वह ऐसे समझौते का एक पक्ष है।

22.2. वे मुद्दे (दूसरी श्रेणी) जिन्हें मुख्य न्यायाधीश/उनके द्वारा नामित न्यायाधीश निस्तारित कर सकते हैं (या उन्हें मध्यस्थ अधिकरण के निर्णय हेतु छोड़ सकते हैं) ये हैं:

(ए) क्या याचिका मृत (लंबे समय से वर्जित) याचिका है या जीवित याचिका है।

(बी) क्या पक्षकारान ने अपने पारस्परिक अधिकारों और दायित्वों की संतुष्टि दर्ज करके या बिना किसी आपत्ति के अंतिम भुगतान प्राप्त करके अनुबंध/लेनदेन संपन्न किया है।

22.3. मुद्दे (तीसरी श्रेणी) जिन्हें मुख्य न्यायाधीश/उनके नामित को विशेष रूप से मध्यस्थ अधिकरण पर छोड़ देना चाहिए:

(i) क्या दायर की गयी याचिका मध्यस्थता खंड के अंतर्गत आती है (उदाहरण के लिए, एक मामला जो किसी विभागीय प्राधिकारी के अंतिम निर्णय के लिए आरक्षित है और मध्यस्थता से अलग या बाहर रखा गया है)।

(ii) मध्यस्थता में शामिल गुण या कोई दावा।"

15. यह प्रश्न कि क्या कोई मध्यस्थता समझौता है और क्या वह पक्ष जिसने अधिनियम की धारा 11 के तहत आवेदन किया है, उक्त निर्णय के संदर्भ में ऐसे समझौते का एक पक्ष है, श्रेणी (1) में आता है और इसलिए, इस पर मुख्य न्यायाधीश या उनके नामित द्वारा निर्णय लिया जाना है।

16. एपी पर्यटन विकास निगम लिमिटेड बनाम पंपा होटल्स लिमिटेड 2010 (5) एससीसी 425 में उक्त निर्णय का पालन किया गया। जहां निर्धारण के लिए आने वाले प्रश्नों में से एक यह था कि क्या मध्यस्थता समझौते का अस्तित्व या वैधता एक याचिका पर विचार करते समय मुख्य न्यायाधीश/नामित द्वारा तय किया जाने वाला मामला है। अधिनियम की धारा 11 के तहत या इसका निर्णय मध्यस्थ द्वारा किया जाना है। एसबीपी एंड कंपनी बनाम पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड 2005 (8) एससीसी 618 और नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम बोघारा पॉलीफैब (पी) लिमिटेड 2009 (1) एससीसी 267 में इस न्यायालय के निर्णय काे आधार मानते हुए, इस न्यायालय ने माना कि उक्त प्रश्न का निर्णय मुख्य न्यायाधीश या उनके नामित व्यक्ति द्वारा किया जाना था। न्यायालय ने मत प्रकट किया:

> "प्रकट होता है कि एसबीपी एंड कंपनी बनाम पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड और नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम बोघारा पॉलीफैब (पी) लिमिटेड में सवाल यह है कि क्या कोई मध्यस्थता समझौता है और क्या जिस पक्षकार ने अधिनियम की धारा 11 के तहत आवेदन किया है, वह इस तरह के समझौते का एक पक्ष है। यह ऐसा मुद्दा है जिसे मध्यस्थ नियुक्त करने से पहले अधिनियम की धारा 11 के तहत मुख्य न्यायाधीश या उनके नामित द्वारा तय किया जाना है। इसलिए इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि इस मुद्दे का निर्णय मुख्य न्यायाधीश के विद्वान पदनाम द्वारा किया जाना चाहिए था और इसे मध्यस्थ पर नहीं छोड़ा जा सकता था।

.....

.....

एसबीपी में भविष्य हेतु ओवररुल किये गये निर्देश के कारण, 26-10-2005 से पहले अधिनियम की धारा 11 के तहत मध्यस्थ की किसी भी नियुक्ति को वैध माना जाना चाहिए और मध्यस्थता समझौते के अस्तित्व या वैधता सहित सभी आपत्तियों पर विचार करने के लिये अधिनियम की धारा 16 के तहत मध्यस्थ द्वारा निर्णय लिया जाएगा। एसबीपी में फैसले में बताई गई कानूनी स्थिति केवल 26-

10-2005 के पश्चात अधिनियम की धारा 11 के तहत दायर किए जाने वाले आवेदनों के साथ-साथ 26-10-2005 तक लंबित अधिनियम की धारा 11(6) के तहत ऐसे आवेदनों (जहां मध्यस्थ अभी तक नियुक्त नहीं किया गया था) को भी नियंत्रित करेगी।"

17. उक्त घोषणाओं के आलोक में, इस मुद्दे पर और अधिक चर्चा करना अनावश्यक है। यह स्पष्ट है कि एक बार अधिनियम की धारा 11 के तहत शुरू की गई कार्यवाही में किसी भी पक्ष द्वारा मध्यस्थता समझौते के अस्तित्व पर सवाल उठाया जाता है, तो इसे मुख्य न्यायाधीश/नामित द्वारा मामले के अनुसार तय करना होगा। ऐसा इसलिए है क्योंकि मध्यस्थता समझौते का अस्तित्व एक क्षैत्राधिकार से सम्बन्धित तथ्य है जिसे अधिनियम की धारा 11 के तहत याचिका पर आदेश देते समय संबोधित करना होगा। वहां स्थिति भिन्न हो सकती है जहां नामांकित मध्यस्थ न्यायाधिकरण के समक्ष मध्यस्थता कार्यवाही शुरू की जाती है लेकिन विपरीत पक्ष मध्यस्थता समझौते के अस्तित्व पर विवाद करता प्रतीत होता है। ऐसी किसी भी स्थिति में मध्यस्थता न्यायाधिकरण अधिनियम की धारा 16(1) के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए स्वयं इस मुद्दे पर निर्णय ले सकता है, जो इस प्रकार है:

"मध्यस्थ न्यायाधिकरणों का क्षेत्राधिकार

16. माध्यस्थम् अधिकरण की अपनी अधिकारिता के बारे में विनिर्णय करने की सक्षमता- (1) माध्यस्थम् अधिकरण, अपनी अधिकारिता के बारे में स्वयं विनिर्णय कर सकेगा, जिसके अंतर्गत माध्यस्थम् करार की विद्यमानता या विधिमान्यता की बाबत किसी आक्षेप पर विनिर्णय भी है, और उस प्रयोजन के लिए,-

(क) कोई माध्यस्थम् खंड, जो किसी संविदा का भाग रूप है, संविदा के अन्य निबंधनों से स्वतंत्र किसी करार के रूप में माना जाएगा; और

(ख) माध्यस्थम् अधिकरण का ऐसाऐसा कोई विनिश्चय कि संविदा अकृत और शून्य है, माध्यस्थम् खंड को विधितः अविधिमान्य नहीं करेगा।"

इस प्रकार, मुख्य न्यायाधीश से संपर्क किए बिना भी पक्षकारान विवादित मामलों को नामांकित अधिकरण को संदर्भित कर सकते हैं, जिसमें यह प्रश्न भी शामिल है कि क्या कोई मध्यस्थता समझौता मौजूद है। ऐसे मामले में भी मध्यस्थता अधिकरण मध्यस्थता समझौते के अस्तित्व का निर्धारण कर सकता है। यह कहना पर्याप्त है कि अधिनियम की धारा 16 के तहत मध्यस्थ अधिकरण को उपलब्ध शक्ति का अर्थ यह नहीं है कि इस मुद्दे को मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा निर्धारित करने के

लिए छोड़ा जा सकता है या छोड़ा जाना चाहिए, यहां तक कि एेसे मामलों में भी जहां पार्टियों में से एक ने याचिका दायर की है अधिनियम की धारा 11 के तहत और दूसरा पक्ष इस आधार पर संदर्भ बनाने का विरोध करता है कि उनके बीच कोई मध्यस्थता समझौता मौजूद नहीं है। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि इस प्रश्न का उत्तर देना होगा कि पक्षकारान के बीच मध्यस्थता समझौता मौजूद है या नहीं, इसका उत्तर केवल तभी देना होगा जब उस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक हो कि मुख्य न्यायाधीश या उनके नामित व्यक्ति संदर्भ का आदेश पारित कर सकते हैं निर्णय के लिए विवाद प्रश्न क्रमांक (1) का उत्तर तदनुसार तय किया जाता है।

प्रश्न क्रमांक 2 के संबंध में

18. पक्षकारान के मध्य एक लिखित अनुबंध दस्तावेज़ है, यह विवादित नहीं है। उक्त अनुबंध में एक मध्यस्थता खंड पाया गया है, यह भी विवादित नहीं है। यह तथ्य कि श्री संदीप के. दबीर ने अयाची की ओर से अनुबंध पर बातचीत की थी, यह तथ्य भी विवादित नहीं है। दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करने से पहले पक्षकारान के बीच पत्राचार का आदान-प्रदान किया गया था और उक्त पत्राचार न केवल श्री दबीर के साथ था, बल्कि श्री सेनगुप्ता के साथ भी था, जो अयाची के अनुसार, दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करने के लिए सक्षम प्राधिकारी थे, यह भी विवादित नहीं है। उक्त पृष्ठभूमि में अयाची का तर्क यह है कि श्री संदीप के. दबीर अनुबंध पर हस्ताक्षर

करने के लिए सक्षम नहीं थे और श्री दबीर को अनुबंध शुरू करने के लिए गलत तरीके से निर्देशित/प्रलोभित/गलत तरीके से निर्देशित किया गया था, जो अयाची के अनुसार, अनुबंध अधिनियम, 1872 के संदर्भ में शून्य है। अयाची द्वारा नोटिस पर भेजा गया उत्तर याचिकाकर्ता द्वारा स्थापित अनुबंध पर दो आपत्तियों को निम्नलिखित शब्दों में सारांशित करता है:-

> "4. हमारे कक्षीकार द्वारा उपलब्ध कराए गए दस्तावेज़, जानकारी और पत्राचार से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि मेसर्स क्लिस ट्रेडिंग प्राइवेट लिमिटेड के बीच क्या चल रहा था। आपके कक्षीकार के प्रतिनिधि और हमारे कक्षीकार के कुछ अधिकारी केवल 150 MTAC2B एल्युमीनियम सिल्लियों की खरीद के संबंध में किसी प्रकार की बातचीत कर रहे थे। किसी भी समय हमारे कक्षीकार ने उक्त सामग्री की खरीद के लिए आपके साथ कोई अनुबंध नहीं किया था।
>
> 8. हमारा कक्षीकार आगे कहता है कि चूंकि आपके कक्षीकार ने श्री दबीर को उक्त अनुबंध शुरू करने के लिए गुमराह/प्रलोभित/गलत निर्देश दिया था, इसलिए यह भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1872 के प्रावधान के तहत भी शून्य है।"

19. इसलिए, सवाल यह है कि क्या याचिकाकर्ताओं द्वारा स्थापित अनुबंध को ऊपर दिए गए पैराग्राफ 4 और 8 में बताए गए दो कारणों से गैर-स्थायी रखा जा सकता है। अयाची द्वारा स्थापित बचाव कि अयाची द्वारा प्रदान की गई जानकारी और पत्राचार केवल पक्षकारान के बीच "किसी प्रकार की वार्ता" का संकेत था, ने मुझे प्रभावित नहीं किया है। दस्तावेज़, जानकारी और पत्राचार को जब उनकी समग्रता में लिया जाता है, विशेष रूप से हस्ताक्षरित अनुबंध दस्तावेज़ के प्रकाश में जो पक्षकारान के पारस्परिक अधिकारों और दायित्वों को निर्धारित करता है, तो यह नहीं दर्शाता कि पक्षकारान केवल एक अनुबंध पर वार्ता कर रहे थे। प्रदान की गई जानकारी, आदान-प्रदान किए गए पत्राचार और निष्पादित दस्तावेज़ इसके विपरीत स्पष्ट रूप से संकेत देते हैं कि पक्षकारान ने अनुबंध को अंतिम रूप दे दिया है और उस पर हस्ताक्षर कर दिए हैं।

20. इसलिए अयाची का यह तर्क भी कि याचिकाकर्ता ने श्री दबीर को गलत निर्देश दिया था, प्रलोभन दिया था या गलत मार्गदर्शन किया था, जो उसकी ओर से अनुबंध पर वार्ता कर रहे थे, उनके पास ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं था, खारिज किए जाने योग्य है। यह स्थापित करने के लिए कोई विवरण तो क्या ऐसी कोई सामग्री भी नहीं है कि श्री दबीर द्वारा अनुबंध दस्तावेज़ पर उसकी स्वीकृति के प्रतीक के रूप में लगाए गए हस्ताक्षर, किसी भी गलत बयानी या ऐसे अन्य विचारों से दूषित हो गए थे जो अनुबंध को दूषित करने का प्रभाव डाल सकते थे। अयाची के द्वारा कोई

ठोस विवरण पेश नहीं किया गया कि याचिकाकर्ता द्वारा किस प्रकार, अनुच्छेद 8 में उल्लिखित प्रलोभन, गलत मार्गदर्शन या गलत दिशा का प्रयोग किया गया, मात्र उक्त अभिव्यक्तियों को बार बार दोहराने से पक्षकारों के मध्य अस्तित्व मे आये अनुबन्ध को अयाची नकार नहीं सकता है। अनुबंध जो पक्षकारान के मध्य अस्तित्व में आया था, उसी पक्ष पर साबित करने का भार है जो ऐसे किसी भी आरोप के लिए गलत प्रतिनिधित्व, धोखाधड़ी या जबरदस्ती के आधार पर अनुबंध से बचना चाहता है। वर्तमान मामले में अयाची द्वारा ऐसा कुछ भी नहीं किया गया है। यहां तक कि अयाची ने श्री दबीर और श्री सेनगुप्ता के कर्तव्यों और शक्तियों का कोई चार्टर भी रिकॉर्ड पर नहीं रखा है और न ही यह सुझाव देने के लिए कोई सामग्री रिकॉर्ड पर रखी है कि कथित उल्लंघन के लिए श्री दबीर के खिलाफ वास्तव में कोई कार्रवाई की गई थी। उसके अधिकार की सीमाएं और यदि हां तो उसके विरुद्ध की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई की प्रकृति। यह सारी जानकारी और सामग्री अयाची की विशेष जानकारी में थी। इसलिए, ऐसी जानकारी प्रस्तुत न करने से इसके विरुद्ध प्रतिकूल उपधारणा उत्पन्न होनी चाहिए। याचिकाकर्ता कंपनी के पास किसी भी स्थिति में यह विश्वास करने या यहां तक कि संदेह करने का कोई कारण नहीं था कि श्री दबीर जिसके साथ वह काम कर रही थी, उसके पास उस अनुबंध पर हस्ताक्षर करने का अधिकार नहीं था जिसे दोनों कंपनियों के बीच उनके प्रतिनिधियों के माध्यम से अंतिम रूप दिया गया था। ऐसा

विशेष रूप से तब है जब अयाची के अनुसार, श्री दबीर को प्रतिवादी की ओर से शर्तों पर बातचीत करने के लिए अधिकृत किया गया था। यदि श्री दबीर अनुबंध की शर्तों पर बातचीत करने में सक्षम थे, तो याचिकाकर्ता के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने अनुबंध पर हस्ताक्षर करने के लिए उन्हें प्रेरित किया या धोखाधड़ी की, जिसे अयाची को भेज दिया गया था और जिसे श्री दबीर द्वारा विधिवत हस्ताक्षरित करके वापस कर दिया गया था। इस पृष्ठभूमि में याचिकाकर्ता का इस आधार पर आगे बढ़ना उचित था कि अनुबंध पर अयाची कंपनी की ओर से विधिवत वार्ता और हस्ताक्षर किए गए थे।

21. उक्त परिस्थितियों की समग्रता में, इस न्यायालय को इस बाबत् कोई संदेह नहीं है कि पक्षकारान के मध्य एक कानूनी रूप से वैध अनुबंध वास्तव में अस्तित्व में आया था जिसमें उनके मध्य उत्पन्न होने वाले विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए मध्यस्थता खंड शामिल था। तद्नुसार प्रश्न संख्या (2) का उत्तर सकारात्मक है।

22. परिणामस्वरूप, मैं इस याचिका को स्वीकार करता हूं और राजस्थान उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री न्यायमूर्ति अनिल देव सिंह को याचिका में उल्लिखित अनुबंध से उत्पन्न पक्षों के बीच विवादों के निपटारे के लिए एकमात्र मध्यस्थ नियुक्त करता हूं। मध्यस्थ अपनी फीस और शुल्क और पक्षकारान द्वारा भुगतान किए जाने वाले

अनुपात को तय करने के लिए स्वतंत्र होगा। पक्षकारान आगे के निर्देशों के लिए 10 दिसंबर, 2010 को मध्यस्थ के समक्ष उपस्थित होंगे। रजिस्ट्री इस आदेश की एक प्रति तुरंत सूचना और आवश्यक कार्रवाई के लिए योग्य मध्यस्थ को भेजेगी।

याचिका स्वीकार

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी डाॅ. महेंद्र के. एस. साेलंकी, आर.जे.एस. अपर जिला एवं सेशन न्यायाधीश क्रम-01, श्रीगंगानगर (राजस्थान) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।